कथा और कथेतर का उस्ताद

माधव हाड़ा

न हन्यते

स्वयं प्रकाश अब कीर्ति शेष हैं. अस्वस्थ तो वे थे, लेकिन इतने जल्दी नहीं रहेंगे, यह किसी को पता नहीं था. वे खुद भी अपने स्वस्थ हो जाने के संबंध में आश्वस्त थे. उनकी ख्याति कथाकार के रूप में है, लेकिन वे अपने बातचीत वाले लयदार अनोखे रचनात्मक गद्य के लिए भी जाने जाएंगे. उनकी कथा और कथेतर रचनाओं का गद्य हिंदी का अपना सहज जातीय गद्य है. उनकी सोच आम हिंदी लेखकों से कुछ हद तक अलग थी—उनके यहां तकनीक, ग्लोबलाइजेशन और अन्य नए बदलावों को लेकर कोई रोना-धोना नहीं है. उन्होंने न तो इनसे परहेज किया और न ही इनकी अनदेखी की, जैसा अक्सर हिंदी वाले करते हैं—उन्होंने आमने-सामने होकर इन पर गंभीरता से विचार किया.

स्वयं प्रकाश जी कहानीकार अपनी तरह के थे. कहानी को जो विशेषताएं अक्सर हम इसमें-उसमें खोजते हैं, उनके यहां कमोबेश एक साथ हैं. उनकी कहानियां एक साथ लोकप्रिय और साहित्यिक, दोनों हैं. ये सोद्देश्य हैं, लेकिन उपदेशक और अखबारी नहीं हैं और इनमें जादू जैसी असरकारी किस्सागोई है. ये आधुनिक हैं, लेकिन अपना खाद-पानी परंपरा से भी लेती हैं. इनमें सार्वकालिक कथ्य और सरोकार हैं, लेकिन ये समकालीनता में रची-बसी भी लगती हैं. वे प्रतिबद्ध कोटि के गंभीर कथाकार थे, उनकी अधिकांश रचनाएं सोद्देश्य हैं, लेकिन एक साहित्यिक मूल्य के रूप में उनके यहां लोकप्रियता से परहेज नहीं है.

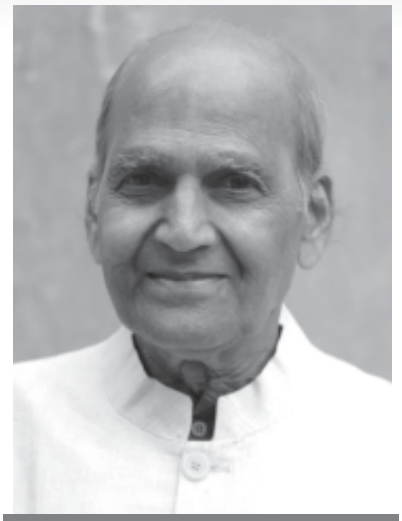

स्वयं प्रकाश
(20 जनवरी, 1947—7 दिसंबर, 2019)

उनकी कहानियों में लोकप्रियता के लिए जरूरी चीजों की वापसी और सार-संभाल की सजगता मिलती है. अपनी कहानियों के आरंभ के मामले में जैसी सजगता स्वयं प्रकाश के यहां है, वैसी हिंदी के कम कहानीकारों में मिलती है. बात बहुत छोटी और कुछ लोगों के लिए नगण्य जैसी है, लेकिन कहानी के साथ पाठक का संबंध यहीं से बनना शुरू होता है इसलिए इसका बहुत महत्त्व है. स्वयं प्रकाश की कहानियों की रोचकता के पीछे एक कारण उनका जीवंत माहौल भी है. उनकी कहानियां अखबारी नहीं हैं. उनकी पैनी और चौकन्नी नजर विवरणों के भी विवरणों में चली जाती है और इससे माहौल जीवंत हो उठता है. हिंदी में सोद्देश्य और लोकप्रियता में भी अनबन जैसा ही कुछ हमेशा रहा है, लेकिन स्वयं प्रकाश ने दोनों में तालमेल साध लिया था. हिंदी में बारीक कातनेवालों ने कहानी के साथ उद्देश्य के टैग को कुछ ज्यादा ही बदनाम कर दिया, अन्यथा हितोपदेश और पंचतंत्र कहानियां तो प्रयोजन सहित हैं. राजा सुदर्शन के मूर्ख पुत्रों को विद्वान बनाने के लिए ही विष्णु शर्मा ने हितोपदेश कहानियां कहीं. स्वयं प्रकाश की अधिकांश कहानियां भी आग्रहपूर्व किसी निष्कर्ष पर पहुंचती हैं और ये अंत में कुछ ऐसा कहती-दिखाती हैं, जो जीवन में उपयोगी है या जीवन को समझने-बदलने में मददगार है. मसलन 'तीसरी चिट्ठी' कहानी का विस्तार अंत में जाकर हर 'शी' मतलब औरत के पीछे लग जाने वाले जोशी के भीतर से बदल जाने पर ठहर जाता है. "बस ठीक है यार! हर टाइम क्या खी-खी-खी-खी! जानवरों की तरह." जोशी की यह पंक्ति कहानी की पंच लाइन है. यह कहानी इस तरह जोशी के जानवर से मनुष्य होने की कहानी बन जाती है. 'मात्रा और भार' (1975), 'सूरज कब निकलेगा' (1981), 'आसमां कैसे-कैसे' (1982), 'अगली किताब' (1988) 'आएंगे अच्छे दिन भी' (1991), 'आदमी जात का आदमी' (1994), 'अगले जनम' (2002) और 'संधान' (2006) जैसे अपने सभी संकलनों में उन्होंने कहानी की सभी विशेषताओं को एक साथ साधने की कोशिश की.

स्वयं प्रकाश हिंदी के उन गिने-चुने कहानीकारों में हैं, जिनके यहां परंपरा की स्मृति और संस्कार भी हैं. हिंदी की आधुनिक रचनात्मक सक्रियता पर यह तोहमत कुछ हद तक सही है कि यह अपनी परंपरा से उस तरह से जुड़ी और पली-पुसी नहीं है, जिस तरह से अन्य भारतीय भाषाओं की रचनात्मकता है. हिंदी में लोक और उसकी बोलियों की बहुत समृद्ध और वैविध्यपूर्ण साहित्य परंपराएं हैं, लेकिन उनकी स्मृति और संस्कार इसकी रचनात्मकता का हिस्सा नहीं बन पाए. बहुत आगे चलकर जिन

कुछ रचनाकारों ने पीछे मुड़कर अपनी परंपरा से अपने को जोड़कर देखा उनमें स्वयं प्रकाश भी हैं. उन्होंने लिखा कि "साहित्य के फैशनों से दूर मैं सोच रहा था कि जिस देश में अठारह पुराण उपलब्ध हों वहां जादुई यथार्थवाद की बात करना कहां तक संगत है?" उन्होंने पीछे मुड़कर हमारी लोककथाओं की ताकत की पहचान की. उन्होंने लिखा कि "एक दिन अचानक लिखते-लिखते ख्याल आया कि वह क्या चीज है जो लोककथाओं को बरसों-बरस जिंदा रखती है? मैं इस नतीजे पर पहुंचा कि एक तो लोककथाओं का कथ्य सार्वकालिक होता है, अर्थात् किसी भी समय का आदमी उसके साथ जुड़ाव महसूस कर सकता है. दूसरे उसके कहने का ढंग इतना रोचक होता है कि सुनने वालों का ध्यान इधर-उधर न भटके. कथा एक सीध में चलती है. उसमें फालतू भटकाव या पेच नहीं होते और उसका प्रवाह निरंतर बना रहता है और...उसमें कुछ कुतूहल का तत्त्व भी होता है. तो मुझे लगा कि ये गुण हमारी कहानी में भी हो सकते हैं. इनमें ऐसा क्या है जिसे हम साध नहीं सकते." उन्होंने आग्रहपूर्वक लोककथा के गुणों को अपनी कहानियों में साधना शुरू किया. उनकी कहानियां 'गौरी का गुस्सा', 'उज्ज्वल भविष्य' और 'बिछुड़ने से पहले' आग्रहपूर्वक लोककथाओं की तरह बुनी-बुनाई कहानियां हैं. उन्होंने अपनी ऐसी कहानियों की नाम संज्ञा भी 'कहानी' के बजाय 'कथा' रखी है. उनकी दूसरी कहानियों में भी लोककथाओं जैसी किस्सागोई, कुतूहल, सबको अपना लगने वाला कथ्य और रोचकता है.

कथेतर रचनाओं में भी स्वयं प्रकाश जी की किस्सागोई का हुनर साफ दिखता है. अभी कुछ दिनों पहले आई उनकी संस्मरणात्मक आत्मकथा 'रेत पर नंगे पांव' अलग अंदाज और स्वाद की रचना है. 'रंगशाला में एक दोपहर' और 'एक कहानीकार की नोट बुक' उनकी अन्य बहुत प्रभावशाली कथेतर रचनाएं हैं. हिंदी साहित्य से जुड़े शाश्वत और ग्लोबल किस्म के विषयों में विचार-विमर्श का कोलाहल तो बहुत है, लेकिन इसमें हमारी जिंदगी को सीधे और तत्काल प्रभावित करने वाले सामान्य मुद्दों पर गंभीर विचार-विमर्श और लेखन नहीं के बराबर है. हिंदी के अधिकांश बड़े रचनाकारों का हमारी जिंदगी को बदलने-बनाने में निर्णायक योग देने वाले फिल्म, टी.वी., फैशन, संगीत, बाजार आदि मुद्दों पर नजरिया अनदेखी या उपेक्षा का है. वे इन मुद्दों पर विचार और लेखन में अपनी हेठी समझते हैं. इस मामले में स्वयं प्रकाश का नजरिया शुरू से ही अलग है. उन्होंने अपने कथाकर्म के साथ हमारे दैनंदिन जीवन से सीधे जुड़े सरोकारों और समस्याओं पर बहुत मनोयोग और गंभीरता से निरंतर लिखा है. समय-समय पर लिखे गए उनके ऐसे आलेख-टिप्पणियां 'एक कहानीकार की नोट बुक' में हैं. इनमें आम हिंदी लेखकों की तरह वे अपने समय और समाज पर विचार करते हुए न तो सभी तरह के परिवर्तनों के प्रतिरोध में खड़े होते हैं और न ही किसी नॉस्टेल्जिया की गिरफ्त में आते हैं. टी.वी., फिल्म संगीत, इंटरनेट आदि पर शायद ही किसी हिंदी लेखक ने उस तरह से विचार किया है, जिस तरह से स्वयं प्रकाश जी ने किया है. उनकी निगाह में टी.वी. हमारे समाज में हुए वैल्यू शिफ्ट का महत्त्वपूर्ण उपकरण सिद्ध हुआ है. वे इसके सम्मोहक और निर्णायक प्रभाव से होने वाले सकारात्मक और नकारात्मक, दोनों प्रकार के परिणामों की तह में जाते हैं. टी.वी. बच्चों में लिप्सा और इकलखुरेपन को बढ़ावा देता है, लेकिन वे इस सच्चाई को भी स्वीकार करते हैं कि यह जाने के लिए नहीं आया है. इंटरनेट को भी उनके अनुसार आने से रोका नहीं जा सकता. वे इनका विरोध करने वालों की खबर लेते हुए लिखते हैं कि "एक तरफ आप सूचना के अधिकार के लिए संघर्ष करते हैं और दूसरी तरफ क्रांति के विरुद्ध विश्वामित्र बनने की चेष्टा करते हैं." मूलतः राजस्थान के अजमेर के निवासी स्वयं प्रकाश अपनी नौकरियों के कारण यायावर रहे और अंत में भोपाल को अपना ठिकाना बनाया. मार्क्सवाद से प्रभावित स्वयं प्रकाश अपने उपन्यास 'बीच में विनय' में विचार और व्यवहार के द्वंद्व को समझते हैं तो 'ईंधन' भूमंडलीकरण की परिघटना पर हिंदी का पहला उपन्यास माना गया. जनवादी आग्रहों के कारण उन्होंने 'फीनिक्स', 'चौबोली' और 'नई बिरादरी' जैसे नाटक लिखे जो बाल साहित्य में उनकी सक्रिय गहरी बेचैनी से उपजती है जिसका कारण हिंदी समाज के जीवन में साहित्य-संस्कृति की उपेक्षा है.

स्वयं प्रकाश अब नहीं हैं. मोबाइल पर 'हां, माधव ! कैसे हो?' वाली अपनापे से लरजती उनकी दिलकश आवाज अब केवल स्मृति में रह जाएगी.

❐

संप्रति : अध्येता, भारतीय उच्च अध्ययन संस्थान, राष्ट्रपति निवास, शिमला-171005
मो. : 94143 25302
ईमेल : madhavhada@gmail.com

आग्रह

• **हंस** के जिन सदस्यों का वार्षिक शुल्क खत्म हो गया है या होने जा रहा है वे कृपया अपना शुल्क शीघ्र भिजवाएं. चैक अक्षर प्रकाशन प्रा.लि. (Akshar Prakashan Pvt.Ltd.) के नाम से हो. पत्र/राशि भेजते समय अपनी सदस्यता संख्या लिखें या नई/पुरानी सदस्यता एवं ईमेल का उल्लेख अवश्य करें ताकि किसी भी प्रकार के दोहराव से बचा जा सके.

• सदस्यता राशि बैंक में जमा करते समय कार्यालय को अवश्य सूचित करें.

• रेतघड़ी/रपट/अपना मोर्चा (पत्र) की शब्द संख्या अधिक न हो ताकि अधिक से अधिक लोगों को उचित स्थान दिया जा सके. रेतघड़ी के लिए शब्द-सीमा 500 की हो तो हमें सुविधा होगी. **–वीना उनियाल**